THE TIMES OF INDIA

Date: 12-05-17

Aim and shoot

Creating a reliable employment database is essential for effective jobs policy

Reliable data is a pre-requisite for effective policy making. Remove this condition, it will be tantamount to a doctor prescribing medicines in the absence of adequate diagnostics. It is in this context that the Narendra Modi government's decision this week to create a task force on jobs data under Niti Aayog vice chairman Arvind Panagariya should be seen. The task force will suggest ways to improve the quality of data. Job creation is the most important measure of the efficacy of economic policy in India. The task force's recommendations therefore will be key to improving the quality of policy making.Two problems beset data generation in India. Robust data on a key area such as employment is generated once in five years by the National Sample Survey Organisation, which leaves policy makers at a disadvantage for long periods. On the other side of the spectrum, high frequency data such as the monthly index of industrial production is unreliable. Consequently, users resort to proxies or the government comes up with unsatisfactory alternatives. For instance, the quarterly employment survey by the labour bureau is based on just eight sectors of the economy.As we wait for the task force's suggestions and subsequent changes, there is much work to be done on the policy side. The 2011-12 NSSO survey on employment showed that India's unemployment rate was 2.2%, lower than most advanced economies. However, the survey doesn't really bring out the dismal employment scenario in terms of quality of jobs. A large section of India's working population is stuck in low paying, informal jobs with limited opportunities of mobility. This dimension of India's jobs landscape must be tackled immediately. Policy should look at both immediate results and long term measures.The Modi government's initial emphasis on ease of doing business is flagging and needs to be pursued with more vigour. India is overregulated in the wrong areas, which discourages new entrants. The economy loses out on jobs on account of red tape. Eliminating needless regulatory hurdles must be complemented with greater emphasis on appropriate education. Skilled and adaptable workers are the ones most likely to find work. The failure to create jobs has manifested itself in new and more violent agitations for reservation. There is no time to lose.

दैनिक भास्कर

Date: 12-05-17

अंतरराष्ट्रीय अदालत में जाने के फायदे हैं तो नुकसान भी

पाकिस्तान में जासूसी के झूठे आरोप में मौत की सजा पाए भारतीय पूर्व नौसेना अधिकारी कुलभूषण जाधव को बचाने के लिए हेग के अंतरराष्ट्रीय न्यायालय का दरवाजा खटखटाकर भारत ने एक ऐसा राजनयिक दांव खेला है, जिसके दूरगामी परिणाम होंगे। अगर इसमें भारत की जीत होती है तो अंतरराष्ट्रीय दबाव बनाकर कुलभूषण जाधव को फांसी के तख्ते से बचाकर भारत यह साबित कर सकता है कि वह पाकिस्तान के बलूचिस्तान में किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं कर रहा है। लेकिन इसी के साथ भारत अपने इस पड़ोसी के साथ विवादों को निपटाने के उस दोतरफा सिद्धांत से हाथ धो सकता है, जिसे पंडित जवाहर लाल नेहरू ने शुरू किया था और शिमला समझौते के तहत उसे वैधानिक रूप दिया गया था। पहले तो पाकिस्तान इस मामले पर अंतरराष्ट्रीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार को चुनौती देगा और अगर नहीं दे पाया तो वह कुलभूषण की फांसी को टालने के दुनियाभर के दबाव को सहने को मजबूर होगा। भारत संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भी जा सकता है। लेकिन फिर पाकिस्तान को कश्मीर के मामले को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर उठाने का एक नया मौका मिलेगा। यही कारण है कि कांग्रेस पार्टी ने सरकार को चेतावनी देते हुए पूछा है कि क्या अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में जाने के दूरगामी परिणामों का उसे अहसास है। भारत ने पाकिस्तान पर वियना सम्मेलन समेत 1966 के नागरिक और राजनीतिक अधिकारों की संधि के उल्लंघन का आरोप लगाया है। पाकिस्तान का कहना है कि भारत के पास पाकिस्तानी कानूनों के तहत समाधान पाने के रास्ते अभी मौजूद हैं। भारत ने पाकिस्तान सेना अधिनियम 1952 की विभिन्न धाराओं के तहत अपील भी की है लेकिन, जब पाकिस्तान जाधव को पकड़े जाने के सालभर तक उसके बारे में भारत को कोई जानकारी नहीं देता और वाणिज्य दूत को उससे मिलने नहीं देता तो वह उन अपीलों पर कोई सुनवाई करेगा, इस पर भरोसा नहीं होता। पाकिस्तान तो मामले की तुलना अजमल कसाब के मामले से कर रहा है। शायद पाकिस्तान इस मौके पर वैसा करने की कोशिश भी करे। फायदा सिर्फ भारत को ही नहीं पाकिस्तान के नागरिक प्रशासन को भी हो सकता है। मुकदमे पर आने वाले भारत समर्थक फैसले के बाद नवाज शरीफ भारत के साथ रुकी हुई वार्ता शुरू कर सकते हैं और राजनयिक संबंधों की कमान सेना के हाथों से अपने हाथ में ले सकते हैं।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 12-05-17

सागर की शिकायत सुनने का है वक्त

इंसान की आपराधिक लापरवाही से समुद्र में विषैले तत्त्वों का स्तर इतना बढ़ गया है कि समूची पृथ्वी के पर्यावास के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। इस संबंध में विस्तार से जानकारी दे रहे हैं श्याम सरन

सागर मंथन का पुराना मिथक अपने आप में यह संदेश समेटे हुए है कि सबके अस्तित्व के लिए समुद्र की मौजूदगी अनिवार्य है। उस मिथक में समुद्र अमृत और विष दोनों को धारण किए हुए है। एक जीवनदायी है तो दूसरा सर्वनाश कर सकता है। अगर भगवान शिव ने विषपान नहीं किया होता और उसे अपने कंठ में नहीं धारण नहीं किया होता तो समुद्र से निकलने वाली सारी अद्भुत वस्तुएं निस्सार हो गई होतीं। उनका कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। ऐसी वस्तुओं में कामधेनु गाय, कल्पवृक्ष समेत तमाम बेहतरीन वस्तुएं शामिल थीं। क्या आज भी यह बात सही नहीं प्रतीत होती? मानवता एक बार फिर समुद्र का विचारहीन तरीके से दोहन कर रही है। जहरीला कचरा, प्लास्टिक और तमाम अन्य नुकसानदेह पदार्थ समुद्र में मिलाए जा रहे हैं। जल्दी ही समुद्र के भीतर मौजूद जलीय जीव तथा अन्य अकूत खजाने जहरीले पानी के शिकार हो जाएंगे। समुद्र का पानी आधुनिक हलाहल बनकर रह जाएगा। इस बार फर्क केवल यह है कि कोई भगवान शिव नहीं हैं जो इस हलाहल को पीकर मानवता की रक्षा करें। हमारे सागरों की हालत में आ रही खराबी कोई नई बात नहीं है लेकिन अब यह ऐसी स्थिति में पहुंच गई है जहां पृथ्वी का पूरा पर्यावास संतुलन बिगडऩे का खतरा उत्पन्न हो गया है। दरअसल हम समुद्रों को हल्के में ले रहे हैं। समुद्र का विशाल आकार अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि उसमें मिलने वाला जहर कितने बड़े पैमाने पर संसाधनों को नुकसान पहुंचाएगा। हम अपने समुद्री क्षेत्र पर जरूरत से ज्यादा दबाव डाल रहे हैं। उधर, वैश्विक जलवायु परिवर्तन इसे अलग ढंग से प्रभावित कर रहा है।

पृथ्वी के मौसम का सीधा संबंध समुद्रों की स्थिति से है। समुद्री लहरों की दिशा व उनका रुख और समुद्री पानी की रासायनिक अवस्था भी उसे प्रभावित करती है। वर्ष 2011 में ऑक्सफर्ड विश्वविद्यालय के एक शोध समूह ने समुद्र में बढ़ते अम्ल को लेकर चिंता जाहिर की। उसका कहना था कि वातावरण से भारी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण इसके लिए उत्तरदायी है। रिपोर्ट में कहा गया कि इसके चलते समुद्र में ऑक्सीजन का स्तर कम होता जा रहा है जिसका प्रभाव समुद्री जीव-जंतुओं और वनस्पतियों पर भी पडऩा तय है। दुनिया भर के समुद्रों में ऐसे क्षेत्र पनप चुके हैं जहां जीवन की संभावना ही समाप्त हो चुकी है। पिछली गिनती के वक्त ऐसे 405 क्षेत्र विकसित हो चुके थे और अगर तत्काल उपाय नहीं किए गए तो इनकी तादाद और अधिक बढऩी तय है। ऑक्सफर्ड विश्वविद्यालय के इसी समूह ने चेतावनी दी थी कि इन मृत क्षेत्रों के कारण अतीत में भी बड़ी तादाद में समुद्री प्रजातियां नष्टï हो चुकी हैं और भविष्य में एक बार फिर ऐसा देखने को मिल सकता है।

यह आधुनिक हलाहल कहां से आ रहा है? इसका एक बड़ा स्रोत है कृषि क्षेत्र से आ रहा प्रदूषण। खासतौर पर रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का बढ़ता इस्तेमाल नदियों और समुद्र को प्रदूषित कर रहा है। शहरी कचरा भी बहुत बड़ी तादाद में अनुपचारित ढंग से नालियों के माध्यम से समुद तक पहुंचता है। ऐसे में आश्चर्य नहीं कि बंगाल की खाड़ी में और मुंबई के आसपास के समुद्र में ऐसे मृत क्षेत्र विकसित हो रहे हैं। सबसे खतरनाक और तेजी से समुद्र में जगह बनाता कचरा है प्लास्टिक। प्लास्टिक का कचरा एक तरह से समुद्र का दम घोंट रहा है और इसके बावजूद हम अब भी हर वर्ष 80 लाख टन प्लास्टिक समुद्र के हवाले कर रहे हैं। प्लास्टिक आसानी से नष्टï नहीं होता है और इसे पूरी तरह अपघटित होने में करीब 400 साल का वक्त लगता है। समुद्र की सतह पर अब तक प्रति वर्ग किलोमीटर 13,000 प्लास्टिक के टुकड़े औसतन हैं। प्रशांत महासागर में प्लास्टिक का कचरा टैक्सस शहर के आकार का है। इतना ही नहीं प्लास्टिक का कुछ हिस्सा ऐसा है जो सूक्ष्म टुकड़ों में अपघटित होकर मछलियों के पेट में जाता है और वहां से हमारी खाने की मेज तक आ जाता है। इसका असर हमारे स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है। हमारी आधुनिक सभ्यता बड़े पैमाने पर कचरा उत्पन्न कर रही है और समुद्र उस कचरे के निपटान का केंद्र बना हुआ है। हम समुद्र के संसाधनों का भी भयंकर दोहन कर रहे हैं। इतना कि उसे इसकी भरपाई करने तक का अवसर नहीं मिल पा रहा है। पर्यावास के स्थायित्व का अर्थ यह है कि हम धरती के संसाधनों का दोहन एक सीमा से अधिक नहीं करें और संसाधनों की भरपाई होने दें। पर्यावरण संतुलन कायम रखने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। हमें अपनी आने वाली पीढिय़ों के लिए भी वे संसाधन छोड़ जाने चाहिए जिनका हमने भरपूर इस्तेमाल

किया। लेकिन हम ऐसा नहीं कर रहे हैं। मनुष्य की लापरवाही के चलते ही मछलियों की कई प्रजातियां नष्ट होने के कगार पर आ चुकी हैं। जहरीले कचरे और समुद्री यात्रियों के कारण प्रवाल भित्तियों को नुकसान पहुंच रहा है। समुद्र में इनकी हिस्सेदारी करीब 0.1 फीसदी है लेकिन समुद्री जल जीवों का 25 फीसदी इन्हीं से बनता है। इन प्रवाल भित्तियों का खात्मा समुद्री जल जीवों के लिए त्रासदी बनकर सामने आ सकता है। इससे मछली की उपलब्धता प्रभावित होगी जो विकासशील देशों के बीच प्रोटीन की आपूर्ति का बड़ा माध्यम हैं।

दिसंबर 2015 में अपनाए गए स्थायी विकास लक्ष्य की बात करें तो उसमें समुद्रों के संरक्षण और उनके स्थायित्व भरे इस्तेमाल की बात कही गई है ताकि उनके संसाधनों का स्थायित्व भरा इस्तेमाल किया जा सके। अब ऐसे विकास को आगे बढ़ाने के लिए नीली अर्थव्यवस्था का एक सर्वथा नया विचार सामने आ चुका है। इसके लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग की कोशिशें चल रही हैं। लेकिन इसके बावजूद समुद्रों के स्तर में गिरावट का सिलसिला लगातार जारी है। हालांकि इसके लिए अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक माहौल अभी पहले की तुलना में कम तैयार है। संयुक्त राष्ट्र समुद्री सम्मेलन का आयोजन आगामी 5 से 8 जून के बीच होना है। यह एक बड़ा अवसर है जब अंतरराष्ट्रीय समुदाय इस संकट से निपटने के बारे में गंभीर चर्चा कर सकता है। भारत की 7,500 किलोमीटर की सीमा समुद्र से लगती है। यह सम्मेलन हमारे लिए खास मायने रखता है। देश में राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान जैसे कई अग्रणी संस्थान भी हैं जो समुद्री शोध में बेहतर पकड़ रखते हैं। भारतीय क्षेत्रीय समुद्री महासंघ और बंगाल की खाड़ी में बिम्सटेक के हिस्से के रूप में भी भारत इस क्षेत्र में बढ़त कायम कर सकता है। समय बहुत तेजी से हाथ से निकल रहा है।

(लेखक पूर्व विदेश सचिव हैं। लेख में प्रस्तुत विचार निजी हैं।)

Date: 12-05-17

अस्थायी राहत

अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के उपग्रहों ने बीते कुछ सप्ताह के दौरान जो तस्वीरें कैद की हैं उनमें पंजाब और हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भीषण लपटें देखी जा सकती हैं। हर वर्ष ऐसी आग आसपास के माहौल और निवासियों को भयंकर नुकसान पहुंचाती है। दिल्ली के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र को इसका सबसे अधिक खमियाजा उठाना पड़ता है क्योंकि खेतों में लगने वाली यह आग भयंकर प्रदूषण फैलाती है। दिल्ली न केवल ऐसी आग वाले कृषि क्षेत्र के बीचोबीच आती है बल्कि यहां पहले से ही वाहनों से होने वाले उत्सर्जन और विनिर्माण की धूल के रूप में व्यापक प्रदूषक तत्त्व मौजूद हैं। खेतों में लगने वाली आग से जो धुआं पैदा होता है वह वातावरण में नीचे ही रहता है और अन्य प्रदूषक तत्त्वों के साथ मिलकर घातक धुएं वाला कोहरा पैदा करता है। खेतों में आग का सिलसिला साल में दो बार चलता है। गर्मियों में गेहूं की कटाई के बाद और जाड़ों में धान की फसल के बाद।हालांकि गर्मियों में इसका असर जाड़ों की तुलना में कम रहता है। इन गर्मियों में खेतों में आग लगाने का प्रदूषण पर उस कदर असर नहीं हुआ। इस बार दक्षिणपूर्वी हवाओं के रुख ने हमें बचा लिया। इस बार हवा का बहाव दिल्ली से हरियाणा और पंजाब की ओर था। जबकि आमतौर पर इसका उलटा होता है। लेकिन हवा का रुख तो समस्या का निदान नहीं हो सकता। हवा के रुख में कभी भी बदलाव आ सकता है और अगर ऐसा हुआ तो एक बार फिर भारी प्रदूषण संकट हमारे सामने होगा।

इस समस्या की मूल बात यह है कि खेतों में बचे कृषि अपशिष्टों को जलाना पर्यावरण के लिए गंभीर चिंता का विषय है। इसके बावजूद किसानों को यह आर्थिक रूप से बेहतर विकल्प लगता है। उनके लिए खेत में फसल कटने के बाद बचे अपशिष्टों को जलाना सबसे सस्ता और तेज तरीका है जिसकी मदद से वे अपनी जमीन को अगले दौर की बुआई के लिए तैयार कर सकते हैं। सरकार ने किसानों को इससे दूर करने की

कोशिश की। कहा गया कि ऐसी आग लगाना अवैध है और इसके लिए सजा व जुर्माने का प्रावधान किया गया। यह नीति सही नहीं थी क्योंकि ऐसा करके वह इसे कानून व्यवस्था की समस्या के रूप में देख रही थी। जरूरत थी इसके पीछे की आर्थिक वजह को समझा जाता। किसानों को लगता है कि ऐसा करने से उनको जो आर्थिक बचत होगी वह जुर्माने की तुलना में बेहतर साबित होगी। यही वजह है कि सरकार की तमाम कोशिशों के बावजूद वे मान नहीं रहे। ऐसा भी नहीं है कि किसान खेतों में आग लगाने के पर्यावरण संबंधी असर से नावाकिफ हैं। तापमान के चलते जमीन पर असर पड़ता है और कई महत्त्वपूर्ण पोषक तत्त्व नष्टां हो जाते हैं।

लेकिन फसल के अवशेष जलाने के विकल्प भी अव्यावहारिक और काफी समय लेने वाले हैं। मसलन इस अवशिष्टां को छोड़ दिया जाए कि वह जमीन में सड़कर खाद बन जाए लेकिन इसमें बहुत समय लगेगा। वहीं इसे मशीन से निकालना बहुत महंगा पड़ेगा। इसमें करीब 2,000 रुपये प्रति एकड़ की लागत आएगी जो अधिकांश किसानों के बूते के बाहर की बात है। आखिर उपाय है शोध एवं विकास के क्रम में ऐसे व्यावहारिक विकल्प तलाश करना जो लागत और समय दोनों मोर्चों पर बचत कर सकें। कोशिश यह होनी चाहिए कि इन अपशिष्टांो को खेतों में ही आसानी से सड़ाया जा सके या इन्हें हटाने की लागत कम की जा सके। जब तक ऐसे विकल्प सामने नहीं आते हैं तब तक राज्य सरकार को किसानों को ऐसा प्रोत्साहन देना चाहिए कि वे मशीनों का इस्तेमाल करके खेतों से इसे हटाएं और उनको नई फसल बोने में देरी भी नहीं हो।

नवदुनिया

Date: 12-05-17

जज को सजा से उपजे सवाल

कलकत्ता हाईकोर्ट के जज सीएस करनन का सुप्रीम कोर्ट के साथ शुरू हुआ चूहे-बिल्ली जैसा खेल एक तरह की संवैधानिक त्रासदी में तब्दील होता दिख रहा है। करनन ने सुप्रीम कोर्ट के आठ जजों के खिलाफ पांच वर्ष सश्रम कारावास का दुस्साहसिक आदेश दिया, जिसके बाद सुप्रीम कोर्ट ने करनन को छह महीने के लिए जेल भेजने का आदेश दे दिया है। गौरतलब है कि आजादी के बाद पहली बार हाईकोर्ट के किसी जज को जेल की सजा सुनाई गई है। कुछ लोगों का मत है कि पुनर्विचार याचिका की आड़ में करनन को अगले महीने रिटायर होने दिया जाए और फिर उन्हें गिरफ्तार किया जाए। जाहिर है कि इस तरह संवैधानिक संकट अभी भी टल सकता है।

करनन का आचरण अक्षम्य था, इस पर शायद ही कोई असहमत हो। इसके बावजूद असल सवाल यह है कि क्या सुप्रीम कोर्ट को हाई कोर्ट के किसी जज को इस तरह दंडित करने का अधिकार है? आखिर सुप्रीम कोर्ट अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कैसे जा सकता है? संविधान लागू होने के पहले वर्ष 1949 में देश के तत्कालीन गवर्नर जनरल सी. राजगोपालाचारी ने फेडरल कोर्ट की रिपोर्ट पर हाई कोर्ट के एक जज शिव प्रसाद सिन्हा को हटाया था। उसके बाद महाभियोग के तहत किसी भी न्यायाधीश को नहीं हटाया गया। वी. रामास्वामी के खिलाफ संसद में महाभियोग प्रस्ताव पारित नहीं हो पाया, जबकि सौमित्र सेन व दिनाकरन ने महाभियोग की धमकी के बाद जज के पद से इस्तीफा दे दिया था।उल्लेखनीय है कि सरकार, संसद और न्यायपालिका की अपनी-अपनी शक्तियां और कार्यक्षेत्र हैं। जब सरकार जजों की नियुक्ति में हस्तक्षेप नहीं कर सकती तो फिर सुप्रीम कोर्ट संसद के अधिकार-क्षेत्र में कैसे दखलंदाजी कर सकता है? शायद यह बढ़ती न्यायिक सक्रियता से संसदीय व्यवस्था में हो रहे असंतुलन का ही सवाल है कि इस मसले पर विमर्श के लिए शांताराम नाईक ने संसद का विशेष अधिवेशन बुलाने की मांग की है।केशवानंद भारती मामले में सुप्रीम कोर्ट की संविधान पीठ द्वारा दिए गए निर्णय के अनुसार न्यायिक स्वतंत्रता संविधान का मूल ढांचा है, जिसे संसद भी नहीं बदल सकती। चूंकि हाईकोर्ट के जज को निलंबित या बर्खास्त करने का अधिकार सुप्रीम कोर्ट को नहीं है, इसलिए यदि यह

तर्क दिया जा रहा है तो यह स्वाभाविक ही है कि जब जजों को समान संवैधानिक संरक्षण प्राप्त है तो सुप्रीम कोर्ट ने करनन को सजा देकर तो संविधान का उल्लंघन ही किया। ध्यान रहे कि राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और अन्य संवैधानिक संस्थाओं के विरुद्ध भी आरोप लगते रहे हैं। क्या इन मामलों में भी अवमानना का वैसा ही मामला बनेगा, जैसा करनन को लेकर बना? पिछले दिनों सुप्रीम कोर्ट के पूर्व जज मार्कंडेय काटजू (जो करनन की नियुक्ति प्रक्रिया में शामिल थे) ने एक मामले में सुप्रीम कोर्ट से माफी मांग कर अवमानना के अपराध से मुक्ति पा ली थी। यहां सवाल यह उठता है कि क्या माफी मांगने से अपराध की गंभीरता कम हो जाती है? करनन को जज के पद पर रहते हुए अवमानना के आरोप में सजा सुनाई गई है। सवाल है कि करनन द्वारा 20 जजों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच के बगैर उन्हें अवमानना का दोषी कैसे माना जा सकता है? सुप्रीम कोर्ट द्वारा सजा के बावजूद करनन रिटायरमेंट के बाद भी जस्टिस करनन कहलाकर न्यायिक जगत में शर्मिंदगी का सबब तो बने ही रहेंगे।

संविधान के अनुच्छेद 19 के अनुसार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार है। इसके अतिरिक्त दोषी व्यक्ति को भी अपना पक्ष रखने का कानूनी अधिकार है, लेकिन सुप्रीम कोर्ट द्वारा करनन के बयानों के मीडिया कवरेज पर प्रतिबंध लगाने का भी आदेश दे दिया गया। क्या यह न्यायिक आपातकाल जैसी स्थिति नहीं? करनन ने सुप्रीम कोर्ट के आठ जजों को एससी-एसटी कानून के तहत पांच वर्ष सश्रम कारावास की जो सजा सुनाई थी, उसे सुप्रीम कोर्ट ने नहीं माना, लेकिन एससी-एसटी कानून, दहेज उत्पीड़न, आर्म्स एक्ट एवं दुष्कर्म के फर्जी मामलों में परेशान आम जनता को तो इतनी जल्दी राहत नहीं मिल पाती। करनन को नियुक्त करने वाले कोलेजियम में शामिल पूर्व जज पीके मिश्रा ने कहा है कि करनन की नियुक्ति में गलती के लिए वह शर्मिंदा हैं। कुछ अन्य जजों का कहना है कि करनन की नियुक्ति आठ साल पहले की गई थी और उन्हें अब कुछ याद नहीं है। यह स्वाभाविक है, लेकिन क्या इससे कोलेजियम व्यवस्था की खामी पर मुहर नहीं लगती?

यह समझने की जरूरत है कि व्यवस्था के और अंगों की तरह न्यायपालिका में भी सुधार की दरकार है। असीमित अधिकारों से लैस सुप्रीम कोर्ट को न्यायिक व्यवस्था में सुधार के लिए क्रांतिकारी कदम उठाने चाहिए। यदि जजों की गलत नियुक्ति हो गई हो तो फिर नियुक्त करने वाले कोलेजियम के सदस्यों की भी जवाबदेही तय होनी चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने करनन द्वारा पारित सभी गलत आदेशों को रद्द करके स्वयं को तो सुरक्षित कर लिया है, लेकिन ऐसे गलत आदेशों से अनेक लोग जिंदगी भर मुकदमेबाजी में परेशान रहते हैं। यदि करनन हाई कोर्ट जज बने रहने के लायक नहीं हैं, तो उनके द्वारा पिछले आठ साल में किए गए बड़े फैसलों पर पुनर्विचार करके न्यायिक गरिमा को बहाल करने का प्रयास क्यों नहीं होना चाहिए? भ्रष्टाचार या अनैतिक आचरण की वजह से यदि मुकदमों में गलत फैसला होता है तो जजों को संवैधानिक संरक्षण क्यों मिलना चाहिए?

अमेरिका में जजों में अनुशासन के लिए न्यायिक आयोग का प्रावधान है। सुप्रीम कोर्ट ने मई 1997 में जजों के नैतिक आचरण के लिए 16 सूत्री दिशानिर्देश पारित किया था, जिसे 1999 के चीफ जस्टिस कांफ्रेंस में स्वीकृति मिल गई। संप्रग सरकार ने न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक-2010 में इन दिशानिर्देशों को शामिल करके कानूनन बाध्यकारी बनाने का प्रयास किया, जो पिछली लोकसभा का कार्यकाल समाप्त होने से पारित नहीं हो सका। सुप्रीम कोर्ट ने संसद द्वारा पारित जजों की नियुक्ति के कानून को 2015 में रद्द कर दिया और एमओपी यानी मेमोरेंडम ऑफ प्रोसिजर पर अभी तक अपनी सहमति नहीं दी है। एक तरह से दोषपूर्ण कोलेजियम व्यवस्था प्रभावी बनी हुई है। आखिर जिस व्यवस्था में विसंगति को खुद सुप्रीम कोर्ट ने स्वीकार किया था, वह अस्तित्व में क्यों है? सुप्रीम कोर्ट द्वारा अधीनस्थ अदालतों में जजों की नियुक्ति के लिए अखिल भारतीय परीक्षा प्रणाली पर सहमति जताना सुखद है, लेकिन जजों को परीक्षा से अधिक आत्मनिरीक्षण की जरूरत है।

(लेखक सुप्रीम कोर्ट में वकील हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

जनसत्ता

Date: 12-05-17

कूटनीतिक कामयाबी

पाकिस्तान ने कथित जासूसी के आरोप में पकड़े गए भारतीय नौसेना के पूर्व अधिकारी कुलभूषण जाधव को मौत की सजा मुकर्रर की तभी यह साफ हो गया था कि इस मामले को उसने भारत से अपनी दुश्मनी निकालने का एक और जरिया बना लिया है। खबर आने पर भारत ने लगातार पाकिस्तान को जाधव की फांसी रोकने के लिए समझाने की कोशिश की। पर जैसी कि आशंका थी, पाकिस्तान को भारत की कोई बात सुनना जरूरी नहीं लगा और उसने मौत की सजा को अंतिम रूप देने की ओर कदम बढ़ा दिए थे। जाहिर है, इसके पीछे कोई कानूनी या तकनीकी बाध्यता कम, भारत के प्रति दुराग्रह ज्यादा था। लेकिन इस बीच भारत ने अंतरराष्ट्रीय मंचों पर कूटनीतिक स्तर पर बातचीत करना जारी रखा। इसी का एक सकारात्मक नतीजा मंगलवार को सामने आया जब नीदरलैंड के हेग स्थित आइसीजे यानी अंतरराष्ट्रीय न्याय अदालत ने कुलभूषण जाधव की फांसी पर फिलहाल रोक लगा दी। हालांकि यह एक तात्कालिक राहत है और अब देखना है कि पंद्रह मई की सुनवाई में यह अदालत क्या रुख अपनाती है। फिर भी पाकिस्तान की ओर से जाधव को फांसी के मसले पर जैसी हड़बड़ी मचाई जा रही थी, उसमें भारत को मिली इस कामयाबी को एक अहम कूटनीतिक जीत के रूप में देखा जा सकता है।

दरअसल, इससे पहले भारत ने कम से कम सोलह बार कुलभूषण जाधव को कानूनी मदद मुहैया कराने की मांग की, लेकिन पाकिस्तान ने उसकी मंजूरी नहीं दी। उसका दावा है कि कुलभूषण जाधव भारतीय खुफिया एजेंसी रॉ का एजेंट है और पाकिस्तान में जासूसी कर रहा था। जबकि भारत की ओर से साफ कहा गया कि जाधव पर विध्वंसकारी गतिविधियों में शामिल होने के आरोप बेबुनियाद हैं। जाधव नौसेना से सेवानिवृत्त होने के बाद व्यवसाय कर रहे थे। उन्हें ईरान से गिरफ्तार करके प्रताड़ित किया जा रहा है। भारत ने पाकिस्तान पर राजनयिक संबंधों पर विएना संधि के 'भीषण' उल्लंघन का आरोप लगाया था। आइसीजे ने जाधव को फांसी की सजा की तामील पर रोक के लिए इन्हीं दलीलों को आधार माना है। हालांकि पाकिस्तान के रवैए को देखते हुए इस बात की संभावना कम है कि वह बिना किसी ठोस दबाव के इस मसले पर गंभीरता से विचार करने के लिए तैयार होगा।

मसलन, आइसीजे के रुख के बाद भी पाकिस्तानी विदेश मंत्रालय के अधिकारियों ने कहा कि उन्हें कुलभूषण जाधव को फांसी पर रोक से संबंधित किसी की कोई चिट्ठी नहीं मिली है और कोई भी पत्र जारी करने से पहले आइसीजे को दूसरे पक्ष की बात भी सुननी होगी। इसका अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि वहां भारतीय दूतावास के लोगों तक को जाधव से मिलने नहीं दिया गया। स्वाभाविक ही यह शक पैदा हुआ है कि कुलभूषण जाधव को मौत की सजा तय करने से पहले कोई सुनवाई हुई भी है या नहीं! आमतौर पर अगर किसी पर जासूस होने का आरोप लगाया जाता है तो उसकी एक प्रक्रिया होती है, उसे अवांछित व्यक्ति घोषित किया जाता है और संबंधित देश को उसे वापस बुलाने के लिए कहा जाता है। भारत और पाकिस्तान के बीच कई बार ऐसी स्थितियां आ चुकी हैं। लेकिन अगर नियम-कायदों और नैतिक तकाजों को ताक पर रख कर पाकिस्तान अपनी जिद पर अड़ा रहता है तो निश्चित रूप से भारत के एक पड़ोसी के रूप में भविष्य की बहुत सारी संभावनाएं खत्म होंगी।

THE HINDU

Date: 11-05-17

Navigating the new silk road

China's Belt and Road Initiative reflects global trends and a new paradigm which India can support and shape

Will Prime Minister Narendra Modi surprise everyone and participate in China's 'Belt and Road Forum for International Cooperation' which begins on May 14?

That would be the kind of bold initiative he took in inviting leaders of our neighbouring countries to his swearing-in in 2014, but with far greater significance.It would also be an appropriate response to China's recent four-point initiative and test its intent. China has suggested starting negotiations on a 'China India Treaty of Good Neighbours and Friendly Cooperation', restarting negotiations on the China-India Free Trade Agreement, striving for an early harvest on the border issue and actively exploring the feasibility of aligning China's 'One Belt One Road Initiative' (OBOR) and India's 'Act East Policy'. To repeat Nehru's outright rejection in 1960 of Zhou Enlai's proposal to settle the border dispute would be a historic mistake.

With the long term in mind

India's response should be based on its long-term interest and not short-term concerns. First, treat the Belt and Road Initiative (BRI) — which already has contracts of over $1 trillion covering over 60 countries — as enlarging areas of cooperation; and push for India as the southern node and a 'Digital Asia'. India cannot be a $10 trillion economy by 2032 without integrating itself with the growing Asian market and its supply, manufacturing and market networks.Second, complementary to China's Initiative, develop common standards with the fastest growing economies in Asia that are on the periphery of the B&R Initiative, such as Bangladesh, Vietnam and Indonesia, to facilitate trade, investment and business engagement.Third, offer a new cooperation framework in South Asia around global challenges. For example, sharing meteorological reports, region specific climate research and the 'Aadhaar' digital experience, despite on-going security concerns.Fourth, thought leadership provides an avenue to increasing global influence. Hinduism and Buddhism spread to East and South-East Asia with commerce and an urbanising Asia and world, and needs a new organising principle around shared prosperity — principles that dominated India till 1800 making it the world's richest country for over two millennia.

Economy as strength

India has the potential to be the second largest world economy and Mr. Modi's participation in the Forum will not be as just one of the 28 leaders and 110 participating countries but as a partner shaping the changing world order.

Mapped: China's 'One Belt, One Road' initiative

Countries are now gaining influence more through the strength of their economy than the might of the military. However, analysts in India have yet to recognise these global trends and continue to see the re-emergence of China through a security prism. Calls for new alliances with Iran, Iraq, and Afghanistan "to create a two-front

dilemma for our western neighbo[u]rs, but also encirclement of our northern neighbo[u]r from the west" ignore the strategic impact of the BRI which all countries in Asia, except Japan, embrace and require new approaches to secure our own re-emergence.As a continental power, China is knitting together the Asian market not only with roads, rail, ports and fibre optics but also through currency exchange, standards, shifting of industry and common approaches to intellectual property rights. As the world economy is expected to triple by 2050, Asia will again have half of global wealth. China is seeking to fill the vacuum following the U.S.'s withdrawal from the Trans-Pacific Partnership, and India should add elements to it that serve its national interest as part of its vision of the 'Asian Century'.The bonhomie around the Donald Trump-Xi Jinping meet in Mar-a-Lago, U.S., in April is a pointer to how the global order changes. A 100-day plan to balance trade was a key outcome here and the Forum has the potential to do the same for the Asian giants.

Change also raises the question whether existing approaches, institutions and rules are the best way of organising international relations. Coordination between the major powers is emerging as the best way of global governance in a multi-polar world. Despite their territorial dispute, strategic differences and military deployment in the South China Sea, China and Japan have just agreed to strengthen financial cooperation, and the Forum could provide an impetus to settling the border dispute between India and China.The BRI seeks "complementarities between a countries' own development strategy and that of others", though its goals have yet to be formalised, and India would lend a powerful voice to a strategy and structure that ensures common goals will not be neglected.

Mukul Sanwal is former Director, United Nations

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 11-05-17

सवाल न्यायपालिका की गरिमा का है

भारत की अदालती प्रक्रिया और कार्यवाही को पूरी दुनिया सम्मान की नजरों से देखती है। लेकिन जस्टिस कर्णन और सुप्रीम कोर्ट के बीच जिस तरह विवाद उभरा, उससे हमारी जगहंसाई हो रही है। अदालत की गरिमा से खिलवाड़-सा हो गया है। इसमें दो राय नहीं है कि सर्वोच्च अदालत ने जो भी आदेश जारी किए हैं, वे सभी सांविधानिक प्रक्रिया के तहत हैं। यहां तक कि जस्टिस कर्णन को छह महीने की सजा सुनाया जाना भी। संविधान का अध्याय-4 'संघ की न्यायपालिका' की स्पष्ट व्याख्या करता है। अनुच्छेद-124 में उच्चतम न्यायालय की स्थापना और गठन का उल्लेख है। इसी कड़ी में अनुच्छेद-129 कहता है कि उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अपनी अवमानना के मामले में शक्ति के साथ ही अभिलेख न्यायालय की सभी शक्तियां भी हासिल होंगी। यानी सर्वोच्च न्यायालय के पास यह पूरा अधिकार है कि अगर उसे यह लगता है कि उसकी अवमानना हुई है, तो वह इसके लिए दोषी के विरुद्ध सुनवाई कर सकता है और संबंधित पक्ष को कठोर सजा भी दे सकता है। यह उसका सांविधानिक अधिकार है, भले ही अवमानना करने वाला शख्स कोई आम आदमी हो या हाईकोर्ट के जज जैसा कोई विशिष्ट आदमी। शीर्ष अदालत उससे जवाब-तलब कर सकती है।

यह नहीं भूलना चाहिए कि जस्टिस कर्णन के मामले में पूरी न्यायसंगत प्रक्रिया अपनाई गई है। न्यायमूर्ति कर्णन ने मद्रास हाईकोर्ट में कुछ ऑर्डर ऐसे पास किए थे, जो न्यायसंगत नहीं थे। यह तक कहा गया कि आदेश असांविधानिक हैं। उसी से जुड़ा मामला जब सुप्रीम कोर्ट में पहुंचा, तो शीर्ष अदालत ने उसे रोकने के आदेश जारी कर दिए। जस्टिस कर्णन ने इसे मानने से इनकार कर दिया, जिसके बाद सुप्रीम कोर्ट ने

उन्हें अवमानना की नोटिस भेजी। जस्टिस कर्णन अदालत में निजी तौर पर पेश जरूर हुए, मगर उन्होंने नोटिस का जवाब नहीं दिया। उल्टे उन्होंने आदेश जारी करने शुरू कर दिए। देश के प्रधान न्यायाधीश तक को उन्होंने पांच साल की सजा सुना दी, जो बिल्कुल हास्यास्पद है।

अब जस्टिस कर्णन के पास चंद ही विकल्प बचे हैं। वह पुनर्विचार याचिका दाखिल कर सकते हैं। अनुच्छेद-137 में इसकी व्यवस्था है। यह अनुच्छेद कहता है कि उच्चतम न्यायालय अपने फैसले या आदेश पर पुनर्विचार कर सकता है। यदि जस्टिस कर्णन यह याचिका दाखिल करते हैं, तो संभव है कि सर्वोच्च अदालत पूरे मामले पर फिर से गौर करे, अन्यथा उन्हें जेल जाना ही होगा। इस मामले में सर्वोच्च अदालत किसी कानून या लॉ के अंतर्गत नहीं, बल्कि अपनी सांविधानिक शक्तियों के तहत आदेश जारी कर रही है, इसलिए स्पष्ट है कि आगे भी कार्यवाही सामान्य मामलों की तरह नहीं होगी। सर्वोच्च अदालत खास रुख अपना सकती है। यहां इस तर्क का भी कोई अर्थ नहीं है कि यह मामला संसद में जा सकता है। यह विशुद्ध रूप से अदालत की अवमानना का मामला है, इसलिए इसका निपटारा भी अदालती माध्यम से ही होगा। जस्टिस कर्णन या तो पुनर्विचार याचिका दाखिल करेंगे या फिर छह महीने की सजा भुगतेंगे।

हालांकि अदालती अवमानना के मामले में जजों के कठघरे में खड़े होने के मामले देश में पहले भी दिखे हैं। अभी कुछ महीने पहले ही सुप्रीम कोर्ट के एक पूर्व न्यायाधीश को अवमानना की नोटिस जारी की गई थी। वह निजी तौर पर अदालत में पेश हुए और अपना जवाब भी दाखिल किया। जवाब में उन्होंने माफी मांगी, जिस कारण अदालत ने वह मुकदमा बंद कर दिया। उस मामले में अदालत ने 'केस इज क्लोज्ड' शब्द का इस्तेमाल किया था, यानी मुकदमा खत्म नहीं किया गया, बल्कि बंद कर दिया गया। इसी तरह, कलकत्ता हाईकोर्ट के न्यायाधीश सौमित्र सेन और सिक्किम हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश पीडी दिनाकरण के खिलाफ भी अवमानना की नोटिस जारी की गई थी, मगर इस हद तक आते-आते उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया था, लिहाजा किसी कार्रवाई की जरूरत नहीं पड़ी।

जस्टिस कर्णन इन तमाम मामलों का अंतिम नतीजा देख सकते हैं। वह 1963-64 की उस घटना पर भी गौर कर सकते हैं, जब जस्टिस सईद जाफर इमाम सुप्रीम कोर्ट के जज हुआ करते थे। उनकी तबीयत बहुत अच्छी नहीं रहती थी, इसलिए वह दो-तीन महीने कोर्ट नहीं आए, मगर वह यही कहते रहे कि वह काम कर रहे हैं। उस समय देश के अटॉर्नी जनरल एम सी सीतलवाड़ थे और सॉलिसिटर जनरल सी के दफ्तरी। सीतलवाड़ ने अपनी किताब माइ लाइफ में इस घटना का जिक्र करते हुए बताया है कि किस तरह विवाद बढ़ने पर उन लोगों को तत्कालीन प्रधान न्यायाधीश बी पी सिन्हा ने बुलाया था और फिर प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने जस्टिस जफर इमाम को इस्तीफे के लिए राजी करके उस मामले को खत्म करवाया था।

मेरा स्पष्ट मानना है कि इस मामले को भी खत्म किया जा सकता है। इसे अब तूल देने का कोई मतलब भी नहीं है। जस्टिस कर्णन के माफी मांगते ही यह विवाद खत्म हो जाएगा। हमारी न्याय-व्यवस्था 'जैसे को तैसा' की नीति नहीं अपनाती। मगर इसके लिए जरूरी यह है कि जस्टिस कर्णन अदालत में आएं। एक बार वह निजी तौर पर पेश हो चुके हैं, लेकिन जवाब देने से बच रहे हैं। वह सिर्फ आदेश जारी कर रहे हैं। वैसे भी, उन्होंने जो आरोप लगाए हैं, वे सारे बेबुनियाद ही लग रहे हैं। न्यायपालिका जाति के आधार पर दुर्भावना से प्रेरित होकर काम करे, यह हमने कहीं नहीं देखा है। कम से कम मेरा निजी अनुभव तो इसकी गवाही कतई नहीं देता।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)